विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१ पोस्टल रजि. नं. NSK-64

वर्ष १० • बम्बई • बुद्धवर्ष २५२४ • आषाढ़ पूर्णिमा [शक] • दि. २७-७-१९८० • अंक २

सुखी गृहस्थ

(घ)

किसी भी सामान्य सद्गृहस्थकी यह चार स्वाभाविक अभिलाषाएँ होती है।

१— वह चाहता है कि विपन्न न रहे। विपन्नता, गरीबी, मुखमरी, कंगाली गृहस्थके लिए:- गृहस्थ समाजके लिए अभिशाप है। मुखमरीमें धर्मका पालन तो दूर उसका चिंतन भी कठिन हो जाता है। अतः गृहस्थके लिए समृद्धिसंपन्नताकी अभिलाषा स्वाभाविक है। समझदार गृहस्थ होता है तो यह भी समझता है कि धन-संपदा उसके अपने श्रमसे अर्जित हो, धर्मपूर्वक अर्जित हो। बिना परिश्रम किए जो धन आता है वह उपयोगी नहीं होता, संतोषकारक नहीं होता; उसका अपव्यय ही होता है। इसी प्रकार अधर्मपूर्वक धन आता है तो वह भी सुख-शांतिका कारण नहीं बनता। पराई संपद दबोचकर, चुराकर, लूटकर, छीनकर, छल-छद्म द्वारा अपनी बना ले तो उससे अशांति ही उत्पन्न होती है। ऐसी संपदाका सदुपयोग नहीं होता, दुरुपयोग ही होता है। अतः समझदार सद्गृहस्थकी अभिलाषा यही होती है कि वह श्रमपूर्वक, धर्मपूर्वक, न्याय-नीतिपूर्वक समृद्धि-संपदा अर्जित करे यह पहली अभिलाषा है जिसकी पूर्ति किसी भी सद्गृहस्थके लिए प्रिय होती है, मनोरम होती है, सुखद होती है; पर दुर्लभ होती है।

२— श्रमपूर्वक, धर्मपूर्वक संपदा अर्जित कर ले तो सद्गृहस्थकी दूसरी अभिलाषा होती है कि वह समाजमें, गुरुजनोंमें यश प्राप्त करे। मुखमरी की अवस्था में एक व्यक्ति धर्म-नीतिको तिलांजलि देकर दुष्कर्म करनेपर उतारू हो सकता है। पर जब मुखमरी नहीं हो तो सद्गृहस्थकी अभिलाषा होती है कि उसके द्वारा शरीर या वाणीसे, छोटा या बड़ा, कोई भी ऐसा काम न हो जाय जो उसके अयशका कारण बने। बिना दुष्कर्म किए यदि झूठी निंदा होती है तो समझदार सद्गृहस्थ उससे विचलित नहीं होता, परन्तु दुष्कर्म करने पर जो निंदा होती है उससे वह लज्जित होता है, उत्तापित होता है। अतः स्वभावतः समझदार सद्गृहस्थकी यह अभिलाषा होती है कि वह धर्मपूर्वक यशका जीवन जिए। यह दूसरी अभिलाषा है जिसकी पूर्ति किसी भी सद्गृहस्थके लिए मनोरम होती है, प्रिय होती है, सुखद होती है; पर दुर्लभ होती है।

३— धर्मपूर्वक, श्रमपूर्वक संपदा प्राप्त करके और शुभ कर्मों द्वारा यश प्राप्त करके एक सद्गृहस्थकी यह तीसरी अभिलाषा होती है कि वह चिरकाल तक स्वस्थ जीवन जिए। सद्गृहस्थ बखूबी समझता है कि मनुष्य-जीवन बड़ा अनमोल है। इसी जीवनमें अन्तर्मुखी होकर सत्य-दर्शन करते-करते, आत्म-दर्शन करते-करते परमसत्यका साक्षात्कार किया जा सकता है। जीवन-मुक्त हुआ जा सकता है। इसीलिए वह स्वस्थ, दीर्घायु जीवन जीना चाहता है। यह तीसरा अभिलाषा है जिसकी पूर्ति किसी भी

धम्म वाणी

भुत्ता भोगा भता भच्चा, वितिण्णा आपदासु मे।
उद्धग्गा दक्खिणा दिन्ना, अधो पञ्चबली कता।
उपट्ठिता सीलवन्तो, सञ्ञता ब्रह्मचारयो॥
यदत्थं भोगं इच्छेय्य, पण्डिता घरमावसं।
सो मे अत्थो अनुप्पत्तो, कतं अननुता पियं॥
एतं अनुस्सरो भच्चो, अरियधम्मे ठितो नरो।
इधेव नं पसंसन्ति, पेच्च सग्गे पमोदती ति॥

अंगुत्तर निकाय-4/7/1.

मैंने अपनी संपदाका स्वयं उपभोग किया और अपने आश्रितों एवं भृत्योंका भरण-पोषणकर उनकी सुरक्षा की। ऊर्ध्व अग्र दक्षिणाएं दी। पंच बलि दी (पाँच प्रकारके दान कर्म किए)। मैंने शीलवान, संयमी, ब्रह्मचारियोंकी सेवा की, उनका पोषन किया। कोई भी समझदार गृहस्थ इसीलिए तो भोगसंपदाकी कामना करता है। मेरी कामनाएँ पूरी हुईं। मैंने सारे काम ऐसे ही किए जिनके फलस्वरुप मुझे अनुताप नहीं होता।

यों अपने सत्कर्मोंका स्मरण करता हुआ सद्गृहस्थ आर्य धर्ममें स्थित होता है। वह इस लोकमें प्रशंसित होता है और फिर मरने पर स्वर्गमें प्रमुदित होता है।

सद्गृहस्थके लिए प्रिय होती है, मनोरम होती है, सुखद होती है; पर दुर्लभ होती है।

४— धर्मपूर्वक श्रमपूर्वक संपदा प्राप्त करके, स्वजनों-गुरुजनोंमें धर्मपूर्वक यश प्राप्त करके, चिरकाल तक स्वस्थ जीवन जी लेनेपर सद्गृहस्थकी चौथी अभिलाषा होती है कि शरीर छूटने पर उसकी दुर्गति न हो, सद्गति हो, वह स्वर्गगामी हो। वह बखूबी समझता है कि मरनेके बाद यदि अपायगति, अधोगति प्राप्त हुई तो उसके बाहर निकलना अत्यंत कठिन हो जायेगा। अधोलोकके जीवनमें धर्म धारण करनेका प्रश्न ही नहीं उठता। ऊर्ध्वलोकगामी होगा तो जो धर्मसाधना यहाँ सीखी है, उसका अभ्यास कायम रख सकेगा। धर्मपथपर अग्रसर होता जायेगा। परम विमुक्त अवस्थाके समीप होता जायेगा। अतः सद्गृहस्थ अभिलाषा करता है कि मरकर स्वर्गलोकगामी हो। यह चौथी अभिलाषा है जिसकी पूर्ति किसी भी सद्गृहस्थके लिए प्रिय होती है, मनोरम होती है, सुखद होती है; पर दुर्लभ होती है।

भगवानने अपने अग्र उपासक गृहपति अनाथपिंडकको उपदेश देते हुए कहा कि इन चारों प्रिय, मनोरम, सुखद अभिलाषाओंकी पूर्तिके चार धर्मसाधन हैं जिनसे दुर्लभ सुलभ हो जाता है। ये चार साधन हैं ... श्रद्धा संपत्ति, शील-संपत्ति, त्याग-संपत्ति और प्रज्ञा-संपत्ति।

क्या है श्रद्धा-संपत्ति ?

किसी सम्यक् सम्बुद्धकी बोधिके प्रति श्रद्धा जागती है, उनके गुणोंके प्रति श्रद्धा जागती है - - - ऐसे हैं भगवान जो अर्हन्त हैं, सम्यक् संबुद्ध हैं, विद्या और आचरण संपन्न हैं, सुगत हैं, लोकके ज्ञाता हैं, अनुपम हैं। गलत रास्ते चलनेवालोंको सही रास्ते चलानेमें कुशल हैं। देव-मनुष्योंके शास्ता हैं, आचार्य हैं। बुद्ध हैं, भगवान हैं।

संप्रदाय-विहीन शुद्ध-धर्म पर श्रद्धा जागती है - - - धर्म स्पष्ट है, सुआख्यात है, सांदृष्टिक है, अकालिक है, आकर देखने योग्य है, उन्नतिकी ओर ले जानेवाला है और प्रत्येक समझदार व्यक्तिके लिए धारण कर सकने योग्य है।

संत समाजकी पवित्रताके प्रति श्रद्धा जागती है... ये संत सुमार्गगामी है, ऋजुमार्गगामी हैं, ज्ञानमार्गगामी हैं, समीचीनमार्गगामी हैं; शील, समाधि और प्रज्ञामें प्रतिष्ठित होकर अनार्यसे आर्य बन गए है, निर्वाणदर्शी हो गए हैं। इसी कारण संत हैं। निर्मलचित्त हैं इसी कारण पूज्य हैं, वरेण्य हैं, आतिथेय्य हैं, दक्षिणेय्य हैं। लोकमें अनुपम पुण्य-क्षेत्र हैं।

सद्गृहस्थ जब श्रद्धा-संपत्तिसे संपन्न होता है तो उसके चित्तकी कठोरता दूर होती है, मृदुलता आती है। कटुता दूर होती है, मधुरता आती है। कुटिलता दूर होती है, ऋजुता, सरलता आती है। ऐसा व्यक्ति किसीको धोका देकर संपदा नहीं बटोरता। धर्मपूर्वक ही संपदा अर्जित करता है और संपदा अर्जित करनेमें सफल होता है।

क्या है शील संपत्ति ?

जो सद्गृहस्थ शील-संपन्न होता है वह किसी प्राणीकी हत्या नहीं करता, चोरी नहीं करता, व्यभिचार नहीं करता, झूठ नहीं बोलता, मादक पदार्थोंका सेवन नहीं करता। शरीर या वाणीसे कोई ऐसा दुष्कर्म नहीं करता जिसके कारण उसे निंदाका पात्र बनना पड़े। यों शील-संपन्न हुआ व्यक्ति अपयशका भागी नहीं होता। यशभागी ही होता है।

क्या है त्याग संपत्ति ?

सद्गृहस्थ केवल संचय, संग्रह, परिग्रहके लिए ही धन अर्जित नहीं करता। वह मात्सर्य-रहित चित्तका जीवन जीता है। जो उपार्जित करता है उसका संविभाग करता है। उसे बांटता है। प्रसन्नचित्तसे, खुले दिलसे, खुले हाथों दान देता है। यही सद्गृहस्थकी दान-संपदा है जिससे संपन्न होकर जब वह किसी सत्पुरुषको भोजन, वस्त्र, औषधि, आवासका दान देता है तो आयुबलका ही दान देता है जिसके फलस्वरूप उसे स्वयं आयुबल प्राप्त होता है। वह दीर्घजीवी होता है, स्वस्थ होता है।

क्या है प्रज्ञा-संपत्ति ?

सद्गृहस्थ शील, सदाचारका जीवन जीता हुआ चित्तको एकाग्र करनेका अभ्यास कर कायामें कायानुपश्यना, वेदनामें वेदनानुपश्यना, चित्तमें चित्तानुपश्यना और धर्ममें धर्मानुपश्यना करता है। यों अन्तर्मुखी होकर विपश्यनाका अभ्यास करता है तो देखता है कि किस प्रकार समय-समय पर पाँच आवरण-नीवरण बाधक बनकर उसके चित्त पर छाए जा रहे हैं। मानो पाँच दुश्मन उसके सिर पर सवार हो गए हों।

कभी-कभी देखता है उसका चित्त विषम लोभसे अभिभूत होता जा रहा है, जिसकी वजहसे जो नहीं करना चाहिए वह कर बैठता है। जो करना चाहिए वह नहीं कर पाता। अकरणीयके करनेसे और करणीयके न करनेसे उसके सुख व ऐश्वर्यकी हानि होती है। यही होता है जब उसका चित्त द्वेष-दौर्मनस्यसे भर उठता है अथवा आलस-प्रमादसे भर उठता है अथवा बेचैनी व आत्मग्लानि से भर उठता है अथवा शंका-संदेहसे भर उठता है। विपश्यी गृहस्थ श्रावक समय-समय पर प्रकट होने वाले इन पाँचों आवरण-नीवरणोंको दुश्मनोंके रूपमें पहचानता है और समझता है कि ये चित्तके क्लेश हैं, मैल हैं। यों समझकर उन्हें प्रयत्नपूर्वक दूर करता है। उन नीवरणोंका उच्छेदन कर स्थूल-स्थूल सत्यका दर्शन करता हुआ उनका विभाजन, विघटन, विश्लेषण करता है और सूक्ष्म सत्यों का साक्षात्कार करता हुआ परम सत्य निर्वाणका दर्शन कर लेता है। अनार्यसे आर्य बन जाता है। ऐसा सद्गृहस्थ महाप्रज्ञ कहलाता है। पृथुप्रज्ञ कहलाता है। प्रज्ञासंपदासे संपन्न होता है।

प्रज्ञाके बलपर परम सत्यकी ओर यात्रा करता हुआ वह अपने उन सभी कर्म-संस्कारोंका क्षय कर लेता है जो कि अपायगति, अधोगतिकी ओर ले जाने वाले हैं। निर्वाणका साक्षात्कारकर गृहस्थ जब श्रोतापन्न हो जाता है, मुक्तिके श्रोतमें पड़ जाता है तो अधोगतिसे पूर्णतया छुटकारा पा लेता है। उसके जो थोड़ेसे जन्म शेष रह जाते हैं वे ऊर्ध्वलोकके ही होते हैं। इस प्रकार प्रज्ञामें पुष्ट होकर गृहस्थ अपनी सद्गतिके संबंधमें निश्चित और आश्वस्त हो जाता है।

यों श्रद्धा, शील, दान और प्रज्ञा द्वारा सद्गृहस्थ अपनी चारों लोकीय अभिलाषाएँ सहज ही पूरी कर लेता है। दुर्लभ सुलभ कर लेता है।

ऐसा आर्य सद्गृहस्थ जब उत्साहसे, सत्प्रयत्नसे, बाहुबलसे, पसीनेसे, धर्मानुसार संपदा कमाता है तो उन्हें चार प्रकारसे ही खर्च करता है। अपने चार कर्तव्य पूरे करता है।

(क) आर्य श्रावक उस संपत्तिसे अपना भरण-पोषण करता है। अपने आपको स्वस्थ, सबल रखता है। सम्यक् प्रकारसे सुखी रखता है। धर्मपूर्वक सुखी रखता है। अपने माता-पिता, पुत्र-कलत्र, स्वजन-परिजनका भरण-पोषण करता है। नौकर-चाकरों, संगी-साथियों, मित्र-दोस्तोंका भरण-पोषण करता है। उन सबको सबल स्वस्थ रखता है। उन्हें सम्यक् प्रकारसे सुखी रखता है। धर्मपूर्वक सुखी रखता है। प्राप्त समृद्धि-सुविधाओंके सम्यक् परिभोगके क्षेत्रमें यह उसका पहला कर्तव्य है जिसे कि वह पूरा करता है।

(ख) आर्य-श्रावक श्रमपूर्वक और धर्मपूर्वक कमाई हुई संपदाका समुचित संरक्षण करता है। उसे आगसे, पानीसे, चोरसे, शासकसे, अप्रिय उत्तराधिकारीसे अथवा अन्य आपदाओंसे बचाता है और उस संपदा द्वारा अपने आपको विभिन्न प्रकारकी विपदाओंसे बचाता है। आत्म-संरक्षण करता है। आत्म-कल्याण साधता है। प्राप्त समृद्धि-सुविधाओंके सम्यक् परिभोगके क्षेत्रमें यह उसका दूसरा कर्तव्य है जिसे कि वह पूरा करता है।

(ग) आर्य श्रावक श्रमपूर्वक और धर्मपूर्वक कमाए हुए धनसे पंचबलि-कर्म करता है। पाँच उचित क्षेत्रोंमें दान देता है :-

१- ज्ञाति-बलि-कर्म..याने अपने कुटुंबके लोगोंको संतुष्ट प्रसन्न रखनेके लिए यथासामर्थ्य देता है।

२- अतिथि-बलि-कर्म... याने घर आए हुए अतिथिको संतुष्ट प्रसन्न रखनेके लिए यथासामर्थ्य देता है।

३- पूर्वप्रेत-बलि-कर्म... याने अपने पूर्व पूर्वजोंके पुण्यार्थ यथासामर्थ्य दान देता है।

४- राज-बलि-कर्म---याने शासकको संतुष्ट प्रसन्न रखनेके लिए लिए यथाशक्ति देता है।

५- देवता-बलि-कर्म---याने कुल-देवताके सम्मानमें यथाशक्ति दान देता है।

प्राप्त समृद्धि-सुविधाओंके सम्यक् परिभोगके क्षेत्रमें यह उसका तीसरा कर्तव्य है जिसे कि वह पूरा करता है।

(घ) आर्य श्रावक श्रम व धर्मपूर्वक कमाया हुआ धन उन श्रमणों और ब्राह्मणोंको दान देता है जो कि मद-प्रमादसे विरत हैं, क्षमाशील हैं, सदाचारी हैं, अपने आपका दमन करते हैं, शमन करते हैं, अपने आपको सर्वथा विमुक्त करते है। इन सत्पुरुषों को दिया हुआ दान उसके कल्याणका कारण बनता है। प्राप्त समृद्धि सुविधाओंके सम्यक् परिभोगके क्षेत्रमें यह उसका चौथा कर्तव्य है जिसे कि वह पूरा करता है।

जो सद्गृहस्थ धर्मपूर्वक व श्रमपूर्वक कमाई हुई अपनी संपदाका इन चार प्रकारसे सम्यक् परिभोग करता है उसीके लिए यह कहा जा सकता है कि उसने अपनी संपदाका सदुपयोग किया। संपत्ति-समृद्धि कालके अवसरका ठीक-उचित लाभ उठाया। उसे पुण्यमें लगाया। उचित पात्रके लिए, उचित विधिसे धनका व्यय किया। परन्तु इन चारोंको छोड़कर किसी भी अन्य प्रकारसे व्यय करता है तो यही कहा जायेगा कि उसने अपना अर्जित धन अनुचित क्षेत्रमें खर्च किया। अनुचित पात्रके लिए, अनुचित विधिसे नष्ट ही किया।

गृही साधको! धर्मपूर्वक, श्रमपूर्वक संपदा कमा कर उसका धर्मपूर्वक समुचित सदुपयोग ही करें! अनुचित दुरुपयोग न करें। इसीसे सद्गृहस्थका लोक और परलोक सुधरता है, सुखद होता है मंगलमय होता है। यों अपना सही सुख साधें! सही मंगल साधें!!

स. ना. गो.
मंगल मित्र

इगतपुरी में स्वयं-शिविर

क्रमांक	६३	दि.	२-७-८०	से	१३-७-८० तक
,,	६४	दि.	१३-७-८०	से	२४-७-८० तक
,,	६५	दि.	२४-७-८०	से	४-८-८० तक
,,	६६	दि.	४-८-८०	से	१५-८-८० तक
,,	६७	दि.	१५-८-८०	से	२६-८-८० तक
,,	६८	दि.	२६-८-८०	से	६-९-८० तक
,,	६९	दि.	६-९-८०	से	१७-९-८० तक
,,	७०	दि.	१७-९-८०	से	२८-९-८० तक

संपर्क : व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि,
इगतपुरी-४२२४०३. (नासिक-महाराष्ट्र) फोन नं. ७६.

सूचना : १) स्वयं शिविर में केवल वे **पुराने साधक** ही सम्मिलित हो सकेंगे जो कि विद्यापीठ की अनुशासन-संहिता का आत्मविश्वास के साथ कड़ाई से पालन कर सकें।

२) कोई साधक यदि पूरे शिविर में सम्मिलित न हो सके तो वह अपनी सुविधानुसार बीच में कम दिनों के लिए भी सम्मिलित हो सकता है।

३) प्रत्येक अवस्था में आवश्यक है कि व्यवस्थापक से अपना स्थान सुरक्षित रखने की पूर्व स्वीकृति प्राप्त कर लें।

४) स्वयं शिविर में अन्य सभी सुविधायें उपलब्ध रहेंगी।

व्यवस्थापक

आगामी शिविर

Camp. No. 181 MONTRIAL (Canada) July 31-Aug. 10
Contact : Mr. Roger Gosselin, 189, Rue St. Jacques, East Angus, Quebec J0B 1KO, canada.
Tel. : (819) 832-2497.
Camp. No. 182 CHICAGO (U. S. A.) Aug. 13-23
Concact : Dr. S. C. Soni, 405, W. Palladium Dr., Joliet, IL 60435. U. S. A. Tel. : 815-744-4678.
Camp. No. 183 MENDOCINO, Calif. (U. S. A.) Aug. 26-Sept. 6.
Contact : Dr. Jacques Tenzel, P. O. Box 1128, Mendocino, Calif. 95490 U.S.A. Tel. : (707) 937-0485.
Camp. No. 184 SYDNEY (Australia) Sept. 14-26.
Contact : Carolyn Walsh, 12, King William St., Greenwich, NSW 2065, Australia. Tel. 43-1568.
Camp. No. 185 PERTH (Australia) Sept. 29-Oct. 9.
Contact : Mr. Doug. Solomon, 116 Marine Pde., Cottesloe, W. A. 6011, Australia. Tel. 09-321-4534.

P. S :- जिन साधकोंके कोई मित्र, परिचित व संबंधी इन उपरोक्त देशोंमें रहते हों, वे उन्हें सम्मिलित होकर लाभान्वित होनेकी सूचना व प्रेरणा दे सकते हैं।

फोन : २७२०० घर-५५६३७
श्री. जी. डी. शर्मा, वकील
३९३, नवा मंगळवार पेठ, नरपतगीर चौक, पुणे-४११ ०११.
की मंगल कामनाओं सहित

एक शुभेच्छुककी
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

धन आयां गरबै नहीं, चलै न चाल कुजाल ।
सतपथ पर अवचळ र वै, गृही र वै खुसहाल ॥
संपद आयां सतपुरुस, र वै विनम्र विनीत ।
जीं डाळी पर फळ लगै, झुकणै की ही रीत ॥
सतपुरुसां सद् संपदां, हूवै सद् उपयोग ।
सदा सुकारथ ही लगै, हुवै न मिथ्या भोग ॥
सील धरम पालन करै, करै न कूड़ा काम ।
सिर नीचो हूवै नहीं, हुवै नहीं बदनाम ॥
दुस्करमां लज्जित हुवै, हुवै घणो अनुताप ।
सज्जन सत्करमां, सुखी, र वै दूर संताप ॥
मां बापू की बंदगी, सन्तां को सन्मान ।
परिजन को पोसन करै, गृही र वै सुखवान ॥

दोहे धर्म के

श्रद्धा जागे बोधि पर, चले बोधिके पंथ ।
बोधि जगावे स्वयंकी, मंगल जगे अनंत ॥
श्रद्धा जागे धर्म पर, चले धर्म के पंथ ।
दुराचरणसे मुक्त हो, दुर्जन होवे संत ॥
श्रद्धा जागे संत पर, चले शांतिके पंथ ।
शांति समाए चित्तमें, होय दुखोंका अंत ॥
त्याग धर्मका मूल है, दान सुखोंका कोष ।
पुण्य क्षेत्रमें दान दे, मिले अमित संतोष ॥
सद्गृहस्थ की संपदा, जनहितकारी होय ।
कर दे दूर विपन्नता, मंगलकारी होय ॥
दान, शील, श्रद्धा जगे, प्रज्ञा जगे प्रगाढ़ ।
लोक और परलोक में, आए सुखकी बाढ़ ॥

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक : **रामप्रताप यादव**, ग्रीन हाऊस, २ री मंजिल, ग्रीन स्ट्रीट, फोर्ट, बम्बई २३. टेलीफोन : ३१३५१०. • मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपुर, नासिक ४२२ ००७. टेलिफोन ८८२५१ •
पत्रिका में विज्ञापन दर : आधा पृष्ठ रू. ५००/-, चौथाई पृष्ठ रू. २५० /- • वार्षिक शुल्क रू. ५/-, आजीवन शुल्क रू. ५१/-

"विपश्यना"
पो. रजि. नं. NSK-64

Licence No. NS 18
Licensed to post without pre-payment

प्रेषक :
सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट
विपश्यना विश्व विद्यापीठ
धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३.
(नासिक, महाराष्ट्र)

To